माँ और माँ की माला

जीवन–परिचय

नाम	:	श्रीमती सरस्वती देवी दुजारी
जन्म	:	१९१६ ई० (अगहन सुदी ५ वि० स०१९७४) वाराणसी।
देहान्त	:	१३ जुलाई १९९९
पिता	:	मोती सिंह जी टावरी
माँ	:	श्रीमती गंगादेवी टावरी
विवाह	:	१९२६ ई० १० वर्ष की आयु में श्रीगोपालदास दूजारी की धर्मपत्नी बनीं
पति-विछोह	:	१० मई १९९२
पुत्र	:	श्रीशंकर लाल दुजारी
	:	श्रीघनश्याम दुजारी
	:	श्रीराम दुजारी
	:	श्रीदीपक दुजारी
पुत्री	:	स्व० श्रीमतीराधाबाई
	:	श्रीमतीविमला बाई
पौत्र	:	५
पौत्रियाँ	:	९
प्रपौत्र	:	१
प्रपौत्री	:	१

□

विषय - सूची

१.	हमारी माँ	५
२.	माँ और माँ की माला	९
३.	वात्सल्य की मूरत	१०
४.	माँ ने लगाई अनोखी बगिया	११
५.	भाभी माँ	१४
६.	मेरी सासु मेरी माँ	१४
७.	वो सुबह क्यों आयी?	१५
८.	पाठ शाला माँ सरस्वती की	२०
९.	एकता का सूत्र	२१
१०.	सब कुछ मिला मुझे माँ के कारण	२२
११.	दूर रहकर भी प्यार पाया निरन्तर	२३
१२.	पोतियों की भावभरी श्रद्धांजली	२४
१३.	She will always be in our hearts	२६
१४.	अन्तर्मन की कथा	२८
१५.	माँ के बाद	३२
१६.	१३ जुलाई	३३
१७.	एक अनमोल रतन	३४
१८.	जीवन–निधि	३५
१९.	वृक्ष का एक फूल	३५
२०.	स्थित प्रज्ञ-दर्शन	३६
२१.	परिवार साधना	३६
२२.	मेरी पूज्य आदरणीय भूवाजी	३८
२३.	सेठानी माँ	३९
२४.	मातृ स्वरूप पूज्यनीय व्यक्तित्व	४०
२५.	विश्वास	४६
२६.	माँ के प्रिय भजन	४६

❑

हमारी माँ

स्वभाव में उदारता, व्यवहार में समता, अनुशासन में कोमलता, मस्तिष्क में चेतनता, मन में सरलता, बुद्धि में कुशाग्रता, जीवन में निर्भयता का समान्वित स्वरूप हमने अपनी माँ में देखा। उन्होंने जीवन में दुखों का प्यार से गले लगाया, सुखों को बांटा, पर-हित साधन नें अपना सर्वस्व लुटाया। परिवार का मान, अतिथि का सम्मान और गुणियों का गान उन्हें प्रिय रहा।

'श्रीकृष्ण शरणं मम' का जप करने वाली माँ ने अपने जीवन का प्रारंम्भ श्रीमद्भगवद्गीता के कर्म योग से किया और अपनी सद्वृत्तियों से उसे निखारा। बड़े परिवार की (स्व.मोती सिंहजी एवं श्रीमती गंगादेवी टावरी) एकमात्र पुत्री अत्यंत लाडली होते हुए भी जब वे पूज्य पिताजी स्व० गोपालदास दुजारी की जीवनसंगिनी बनीं, तो उन्होंने कर्म को ही धर्म बना लिया। वे कहती थी कि धर्म हमारा अपना हित है। अपना हित तो हम कभी भी कैसे भी कर लेंगे, पर सेवा पूर्ण कर्म से सबका हित होता है। इसीलिए सारे परिवार का प्रतिपालन उन्होंने इतनी अच्छी तरह से किया कि सारे कुनबे की ही नहीं, सभी रिश्तेदारों और आत्मीयजनों की भी माँ बन गयी। हर प्राणी को सुख देना ही उनका धर्म था। घर-गृहस्थी का कार्य करके भी काफी समय बचाकर वे अनेक शास्त्रों का अध्ययन मनन कर लेती थी। ज्ञान के मनन-चिन्तन से उनका जीवन अनुकरणीय बन गया। वाणी में इतनी मधुरता थी कि किसी भी समय कभी भी उन्होंने कटु शब्द नहीं कहें। हम बच्चों को माँ की ताड़ना का स्मरण तक नहीं है। वे हमारे सुख दुःख को बाँटती और सक्रिय रहती थी। हमें सुलाकर सोती थी,और हमारे जगने से पूर्व, वे आवश्यक कार्यों से निवृत्त हो तैयार मिलती थी। हमें खिलाकर भोजन करती थी। व्यस्त होकर भी हर समय मस्त रहती थी। चिन्त का चिन्तन करती थी। विषाद को हंसकर प्रसाद के रुप में ग्रहण करती थी। हर उम्र के साथ उनका मानसिक सन्तुलन

रहता था। हमारी गलतियों का बोध उनकी खामोशी से होता था। डांट फटकार का कभी कोई काम नहीं। हर पल हर दिन एक सा व्यक्तित्व। एक बिन्दी के श्रृंगार से उनका ललाट चकमता था। हाथों में कंगन उनकी सम्पन्नता के परिचायक थे। सादी साड़ी में उनका रूप निखरा रहता था। पू० बाबू जी की और हम बच्चों की शक्ति स्वरुपा हमारी माँ सबकी माँ थी।

व्यवहार का प्रतिपालन

किसी भी उम्र में किसी भी परिस्थिति में एक सा व्यवहार था उनका हर स्थिति में अपने परिवार की मर्यादा को सर्वोपरि रखती थी। स्वाभिमानी व्यक्तित्व की होकर भी अभिमान से कोसों दूर रही। किसी के प्रति कोई गांठ नहीं थी मनमें। जीवन में किसी भी वस्तु के लिए या काम के लिए ना शब्द नहीं कहती थी। अतिथि-सत्कार में इतना ममत्व उडेलती थी कि सहजता से वह ग्रहण हो जाता था, और स्वय को सर्वोपरि मानता था। उनके दरबार में हर आनेवाले को समानता से स्वागत-सत्कार देने में ही जीवन भर उन्हांने विश्वास किया। अन्तिम समय में भी नेत्र दान दिया। लेने की कभी कोई आकांक्षा नहीं थी, कोई लालच नहीं था। संग्रह का स्वभाव नहीं था। बाँटने का चाव था अपना सब कुछ लुटाकर भी मन में सम्पन्नता ही संजोये रहती थी। बनारस में बेटे बहुओं के मित्र-उनके जाने पहचाने लोग उनका अपना परिवार था, पोता-पोती के मित्र उन्हें अपनी दादी माँ समझते थे। व्यवहार की सर्वोच्चता तो यह थी कि वह सबकी ममतामयी माँ थी, सिर्फ माँ।

अन्तिम साधना

गृहस्थ धर्म को निभाती हुई भी हमारी माँ सच्चे अर्थों में एक भक्त हृदयवाली परम वैष्णवी थी। गीता की अनन्य उपासक होकर भी हर धर्म का हर भगवान का सम्मान करती थी। परिवर्तन उनके स्वभाव का विलक्षण गुण था जो जिसमें खुश होता वही उनकी खुशी बन जाती थी। वैष्णव सम्प्रदाय की लालन की सेवा में प्रभु को अर्पण की सामग्री अनायास ही पोता-पोती

आकर खा लेते थे तो हंसकर यही भाव लेती थी कि आज अपने आप ही भोग लगा लिया कान्हा ने। भक्त हृदय का स्वागत करते समय उनका ललना भी उनकी प्रतीक्षा करके बैठा रहता था। पर नियम की साधना में कभी कोई अवसर नहीं गंवाया। जैसे स्वयं रहती थी वैसे ही अपने प्रभु को भी रखती थी। अनकही बातों को भी बच्चों ने समझा और उनकी हर इच्छा को स्वरुप दिया। प्रातः ३ बजे उनकी सुबह हो जाती थी और साधना में लग जाती थी। ६ बजे से गृहस्थ धर्म में आ जाती थी। न तो साधना की गुरुता का दर्शन कभी किसी को होता था न उनका प्रवचन, बस प्रभु को समर्पित रहती थी। वे अनन्यता ईश्वर में रहती थी, जिसका दर्शन हम लोगों ने १२ जून से १२ जुलाई की अवधि में किया। रातभर साधना, शारीरिक कष्ट को कभी कष्ट के रुप में व्यक्त नहीं किया और न ही उसे मानने को तैयार थी, सिर्फ शरीर का धर्म मानकर उसे अपने जीवन से अलग रखती थी। दवाइयों पर कभी विश्वास नहीं किया-अनुभव की प्रागढ़ता इतना ज्यादा थी कि स्वयं ही हर समस्या का समाधान कर लेती थी। एक बार हमने डाक्टर से कहा कि रात को इन्हें नींद नही आती। सारी रात बैठी रहती है। हमारी जिद्द के कारण उन्हें डाक्टर को बताना पड़ा कि मैं रात में सोना नहीं चाहती, क्योंकि मेरी मानसिक साधना उसी समय होती है और चमत्कार यह हुआ कि डाक्टर भी उनकी बात मान गये और दवाई के लिए मना कर दिया। इस तरह एक महीना अत्यन्त शारीरिक कष्ट को शान्ति से बिना किसी शिकायत के सिर्फ सहन करती रही। एक पल भी बिना गंवाये उन्होंने। सारे जीवन का अर्जित ज्ञान, प्यार, मानसम्मान सब कुछ एक महीने में जी खोलकर लुटाया। सारे परिवार को बुलाकर खूब प्यार से मिलकर विदा कर दिया। ममतामयी-प्यारमयी वात्सल्यमयी माँ अन्दर ही अन्दर अपनी जीवनयात्रा की तैयारी में लगी रहती थी, यह हमने प्रत्यक्ष देखा। उन्होंने अपने जीवन की उपलब्धियों को जी खोलकर सबमें समान रुप से बांट दिया। निर्जला एकादशी को

तकलीफ बढ़ जाने पर सबकी आँखों के आंसूओं को उन्होंने हंसकर सुखा दिया और अपने छोटे पुत्र श्री (दीपक) को कहा मुझे क्या हुआ है। जो तुम रो रहे हो, व्यथा तो मेरे शरीर को है -मैं तो तुम लोगों के पास ही हूँ। इतनी शारीरिक यातना में भी ममता का हाथ हमें सहलाता रहा। अपना ज्ञान अपना धन सब कुछ प्रातः समय वे बाँटती रही। जिससे उनके बच्चों को हर तरह से सम्पन्नता मिली। प्रवासी (पुत्र- घनश्याम को देखकर हंसकर कहा- चौथा कन्धा भी मेरे पास आ गया। इतनी तकलीफ सहन करके भी हंसती रहती थी। पर अन्दर की साधना- प्रभु के प्रति समर्पण तीव्र होता गया। घर को हर पल वृन्दावन धाम का नाम देकर भक्ति के रस में सरोवार होती रही और हम सब के हृदय में छिप गई है, अदृश्य हो गई है- हमारी माँ। आज उनकी स्मृति में हम उनके प्रबल विश्वास से अपने आत्म-विश्वास को दृढ़ करते रहने का संकल्प लेते हैं, यही हमारी श्रंद्धाजलि है।

-सत्कर्म से प्यार का सिद्धान्त होता है यहीं,
माँ ने किया है अंकुरित एक बीज हम सब में वहीं।
पुरुषार्थ और सच्ची लगन से शपथ हमने ली अभी,
अनुकरण कर हम भी बनें माँ सरस्वती के गुण सभी।

-विमला डागा
(पुत्री)

माँ और माँ की माला

माँ सरस्वती देवी जीवन भर श्रद्धा और विश्वास की राह पर चली और हमारे परिवार के लिए ऐसा मार्ग प्रशस्त कर गयी कि जिस पर चलकर किसी भी विपरीत परिस्थिति को हम सरलता सहजता से बदल सकते हैं।

सोलह वर्ष की आयु में ही माँ ने प्रार्थना एवं जप को जीवन का अभिन्न अंग बना लिया था। वे प्रतिदिन ब्रह्म मुहूर्त्त में उठती और साढ़े तीन बजे से पाँच बजे तक 'श्रीकृष्ण शरण मम' का जाप करती थी। उन्हें विश्वास था कि इस मंत्र से कोई भी कष्ट नहीं आता और अगर आता है तो सहजता से उससे मुक्ति मिल जाती है। माँ के इस विश्वास का असर हम पर भी हुआ और जब भी परीक्षा की कठिन घड़ियाँ आती तो हम माँ से कहते-आज एक माला हमारे लिए भी फेरना। माँ मुस्कराती। उसकी माला में १००८ मनके हैं, और वह लगभग ३१ फीट लम्बी है। हर मोती में अनोखी चमक है, जिसमें हमारी श्रद्धा प्रतिबिम्बित सी होती दिखती हैं। पांच माला फेरने का क्रम निरन्तर चला। जिससे हम भी जप की प्रेरणा मिलती रही और समय समय पर जप का फल भी प्राप्त हुआ।

१० मई १९९२ को पिताजी श्रीगोपालदासजी गोलोक वासी हुए, तत्पश्चात माता जी का जप तप और अधिक बढ़ा। परार्थ एवं परामर्थ उनका श्वास प्रश्वांस बन गया। इस वर्ष निर्जला एकादशी को एक नन्ही सी श्रीनाथजी की भव्य प्रतिमा हमारे परिवार के बच्चों द्वारा माँ को भेट की गयी, उस दिन से मानों वे कृष्णमय हो गयीं। उनकी शारीरिक व्याधियाँ घट गयीं और उनका सारा ध्यान जप में लग गया। ३१ जुलाई को जब वे गोलोक धाम गयीं तो उनकी स्मृति में सहज ही मुँह से निकला कि -

मां भाव थी,
भजन थी,
भक्ति थी,
उत्सव, उत्साह उमंग थी।

सुमन सुगंध से सवासित थी,
धीर, ध्यान, ध्येय थी,
शान्ति और श्रेय थी
साधना सेवा समर्पण थी।

दृष्टि, दृष्य, दर्शन थी,
माँ हम सबके लिए
पूर्णता का प्रतिरूप थी,
ठिठुरता को बचाने वाली धूप थी।

-राम दुजारी (माहेश्वरी)
(पुत्र)

वात्सल्य की मूरत

छोटी सी उम्र में दुल्हन बनकर इस घर में आयी,
'सास' से मैंने सदा माँ की ममता पायी।
बच्चों को पालने को नहीं उन्होंने मुझे एहसास दिलाया,
विनीता को तो हरदम उन्होंने गोद में खिलाया,
प्रभु के विश्वास पर उनको सदैव अमल करते पाया,
"सास" और दादी माँ के कर्त्तव्यों का भी बोध कराया,
ऐसे खजानों का भण्डार उन्होंने हम पर लुटाया,
ऐसी थी वात्सल्य की मूरत माँ शील और धैर्य की प्रतिमा माँ।

सविता
(पुत्रवधु)

माँ ने लगाई अनोखी बगिया

यह मेरी सच्ची भक्ति थी
या माँ तेरी अपार शक्ति थी
जो मैं तेरे पास आ सका
इस अवसर पर ऐसी घड़ी में
बहुत दूर थे हम घरवालों की नजरों से
पर सचमुच हम बहुत करीब थे उनके
तभी तो इस परीक्षा में सफल हो सका
माँ सरस्वती के चरणों पर समर्पित हो सका
प्रभु तेरा लाख लाख धन्यवाद।

जब मेरी बेटी प्रीति ने टोरन्टो फोन कर हमें बताया कि माँ के अथाह खजाने का सहज प्यार सुलभता से पाने के लिए शीघ्र भारत आ जाइये। तत्काल हम घर की ओर दौड़ पड़े। बच्चों की नेक सलाह भी मानने से जीवन में कितना लाभ हो सकता है, इसका उदाहरण मैंने देखा। प्रतिमा, प्रीति, स्वाति और रोहित ने अधिकार पूर्ण रूप से हमें तुरन्त माँ के पास पहुँचने का आग्रह किया, उनके इस अधिकारपूर्ण व्यवहार से मैं प्रभावित हूँ। सचमुच उनकी जिद्द के कारण ही मैं समय पर पहुँच सका।

माँ की लगाई इस सुन्दर बगिया में हम पाते हैं चारों दिशाओं की नर्सरी से लाये विभिन्न पेड़ पौधे (बहुएं) जो उनकी स्नेहमयी देखभाल में पूर्ण रूपेण फल फूल रहे हैं। ऋतुओं के आधार पर निरन्तर महकते हैं, लेकिन इस बगिया कि विशेषता यह है कि यहाँ हमेशा वसन्त ऋतु रहती है। जब किलकारी लगाती चिड़ियाँ (लड़कियाँ) अलग-अलग दिशाओं से इस बगिया में आकर चहकती हैं, तब तो बगिया कि शान और भी बढ़ जाती है।

माँ हम सब आपसे वादा करते हैं कि आपकी इस बगिया की हम हमेशा देखभाल करेंगे और उसमें विशेष आनन्द देने वाली चिड़ियों का विशिष्ट

स्थान हमेशा रहेगा। उन्हें भरपूर प्यार और सम्मान देंगे और बगिया को सुन्दर बनायेंगे। इस बगीचे में हर अतिथि का स्वागत होगा।

माँ के सच्चे, सुन्दर और सुव्यवस्थित जीवन से सभी परीचित है। उनके सद्व्यवहार, सदगुण और सुशिक्षा का साक्षात्कार सभी ने किया है। उनके परोपकार, अतिथि सत्कार , हर किसी को अच्छी शिक्षा देने और जनकल्याण की बातें सभी ने सुनी है और देखी भी है। वे अपनी अलमारी की चाबी हर किसी को दे देती थी। इसी से अनुमान होता है कि दूसरों को कितना विश्वसनीय समझती थी।

उनकी विशेषता यह थी कि उनके स्वर्गवास के बाद भी आज उनकी शिक्षा का असर निरन्तर जारी है। उनका मौन रहकर शिक्षा देने का अनमोल तरीका सीधा दिल को छूता था। हमें ऐसी अनुभूती होती है कि इस परिवार में आज भी उनका शिक्षाक्रम जारी है, तभी तो कोई लिख रहा है, कोई कविता कर रहा है जबकि सत्य यह है कई लोगों ने पहले कभी नहीं लिखा। आज हर कोई अपने दिल की गहराइयों में झाँक कर माँ के आदर्शों को उतारने या उभारने को उतावला हो रहा है। हम सबके मन में नित्य उनके सराहनीय और उत्तम विचार अवतरित हो रहे हैं। सभी का चित्त अच्छाई और ऊँचाई की ओर अग्रसर हो रहा है। ईश्वर से हमारी यही प्रार्थना है कि इस प्रेरणा को जारी रखे और परिवार का हर सदस्य सद्कार्य, सद्धर्म और सत्कर्म से प्रभावित हो।

माँ की विशेषता यह थी कि परिवार के सदस्यों की कमियों को जानकर भी अनजान बनती थी और सहजता से सुधार कर देती थी और दूसरों के सामने न कहकर, उन्हें प्रशंसा का पात्र बनाने के लिए प्रेरित करती थीं।

माँ की विशेष शिक्षा का प्रभाव उनकी बेटियां पर दिखता है। तभी तो चारों दिशाओं में उनका यश फैल रहा है। विमला का सहयोग परिवार को प्रेम सूत्र में जोड़ रखने में सराहनीय है। उसने माँ की शिक्षा को निरन्तर

जीवन में उतारने की कोशिश की है।

उनके भगवत प्रेम का परिचय तो तब हुआ, जब स्वयं श्री श्रीनाथजी उनके कष्ट की घड़ी में उनके समीप आ बैठे।

मैंने दूर रहते हुए भी माँ के करीब रहने का साहस अपने प्रिय सखा लक्ष्मण के बलबूते पर ही किया। जिसने माँ की अद्वितीय सेवा की। उसका स्वभाव अनुकरणीय और सराहनीय है।

मैं नतमस्तक वन्दना करता हूँ, अपनी पू० पाना भूवा जी का, जिन्होंने माँ की अन्ततक बहुत सेवा की और बड़ी बेटी का सही रूप हमारे परिवार को दिखाया। उनकी जितनी भी प्रशंसा करें तो कम है। उनका सारा ही परिवार माँ का विशेष ध्यान रखता था।

ईश्वर से यही प्रार्थना है कि सदैव जीवन में सीखने की भावना हममें जारी रखें।

पूज्य माँ को हमारा शत्‌शत् प्रणाम।

घनश्याम दास माहेश्वरी (दुजारी)
(पुत्र)

श्री

सरस्वती बाई मेरी बड़ी बहन थी, मेरी बड़ी भूवाजीकी एकमात्र बेटी, विष्णुपुर उनका ननिहाल था, को जीजी ननिहाल की शान थी, मामा मामी की अत्यन्त लाडली थीं। विष्णुपुर में बिताया अपना बचपन खुशहोकर हमें बताया करती थीं-बनारस आने पर हमें इतना प्यार देतीं थी कि आज यहाँ आकर हमको बार-बार उस बड़ी बहन की याद आ रही हैं। पर उनके परिवार से मिलता सहज स्नेह हमें यह आभासा दिला रहा है कि आज भी और हमेशा हमें यही सम्मान और प्यार मिलता रहेगा और हमारे मन में उन की याद बनी रहेगी।

गोपीन्द दासराठी

भाभी माँ

माँ का प्यार मिला बचपन में, फिर हो गई वे अदृश्य प्यार मिला भाभी से मुझको माँ का ही सर्वस्व, कभी न मुझको ननद समझकर किया न कुछ व्यवहार, बेटी से भी बढ़कर मुझको करती थी वो प्यार, सद्गुणों की भंडार थीं, वो सत्कर्म सदा ही करती, सत्पथ पर चलना ही सबको सदा सिखाती, बहुत मिला मुझको उनसे, कुछ कर सकती हूँ न बखान, ऐसी भाभी माँ को मेरा शतशत प्रणाम।

-पानाबाई

(ननद)

मेरी सासु मेरी माँ

जिसमें अपनी माँ को पाया,
प्यार से जिनके मैंने अपनी माँ को भुलाया,
ऐसी ही थी एक दैवीय शक्ति,
जिसमें हुई हमें आपार भक्ति,
जिसने मुझे सिखाया सच्चा प्रेम,
जिसमें मैंने देखा एक अद्वितीय फेम (यश)
ऐसे है मेरे धन्यभाग्य।
अब करती हूँ धन्यवाद उस माँ का
जिसने चुनी ऐसी सासु माँ, ऐसा वर और एक सुन्दर घर
बगीया में जिसकी सुरक्षित सुखी और सन्तुष्ट हूँ मैं।।

किसी ने देखा होगा सतयुग
किंसी ने देखा होगा त्रेता युग,
उन युगों में थे राम और श्याम
पर मैंने देखा है एक ऐसा युग
जिसमें माँ ने जन्म दिया एक नवीन युग,
जहाँ सारे युग और अवतार दर्शित है
जहाँ शंकर, श्याम, राम और श्री जैसे पुत्र समर्पित है।।
शक्ति स्वरूपा माँ को था यह वरदान
जाते-जाते उन्होंने दिया विमला में अपना ज्ञान,
हम कैसे करें अपनी इस ननद के गुणों का बखान,
हम करते हैं सभी को शत्-शत् प्रणाम।

-बहुरानी (मधु)

वो सुबह क्यों आयी

माँ का नाम अपने आपमें ऐसा शब्द है जिसको बोलने के बाद स्वर्ग सा सुख, चन्दन सी शीतलता, वृक्ष की छाया, अन्तर्रात्मा की आवाज स्वयं ही सुनने को मिलने लगती है। दुनिया में माँ व पुत्र का रिश्ता तो सभी जानते है, परन्तु माँ सरस्वती सिर्फ हमारी माँ ही नहीं, हमारी गुरु व हमारी सखा भी थीं। हमारी समस्या को वो समझ जाती थी, उसका समाधान भी बहुत ही कम क्षणों में कर देती थी। बचपन में मुझे पढ़ाई के साथ ही साथ भक्ति का ज्ञान उन्होंने दिया। रात में भक्तिकथा सुनाती थी। बड़े भाई आदि अपने कार्यों में व्यस्त रहने के कारण रात में माँ के पास बैठकर सोने चले जाते

थे, जब मैं रात्रि प्रहर में माँ के पाँव दबाता था तो कभी नरसिंह-प्रहलाद, कभी ध्रुव तो कभी कृष्ण की रासलीला की कथा सुनाती थीं। बचपन से ही उन्होंने मुझे हरि दर्शन, बलराम श्रीकृष्ण, सम्पूर्ण रामायण, मदर इण्डिया, सन्त ज्ञानेश्वर, कण कण में भगवान् जैसी फिल्में देखने को भेजा।

१९७३ में मैं हाईस्कूल की परीक्षा देकर हरिद्वार गया, वहाँ पर माँ व बाबूजी पहले ही गये थे। गीता आश्रम (ऋषिकेश) में एक कमरे में हम सभी बैठे थे तो माँ ने मुझे सुबह स्वर्गाश्रम में एक सन्त द्वारा की जाने वाली गुरु वन्दना सीखने को कहा। वन्दना बड़ी थी, उससे मैं संकोच में पड़ गया तो वो बोली। सीख लोगे तो अपने-आप कण्ठस्थ हो जायेगी और तुम्हें छोटी लगने लगेगी। सच , २६ वर्ष हो गये, मैं वन्दना रोज करता हूँ और बहुत ही छोटी सी वन्दना लगती है। स्कूली जीवन में परीक्षा के समय प्रातः उठा देती थी और बादाम की कढ़ी व आलू का पापड खिलाकर परीक्षा के लिए आर्शीवाद देकर भेज देती थी। राम भइया ने उन्हें तीर्थ यात्रा करायी। हमसे बोली तुम कहाँ ले जाओगे? हमने कहा मैं तुम्हें व बाबूजी को विदेश की यात्रा करवाऊँगा। राम भइया ने व शंकर भइया जी ने यह बात सुन ली थी। कुछ दिनों बाद मेरी बात को सच करने के लिए मेरे बड़े भइया ने मेरे साथ उनकी पशुपति नाथ (नेपाल) की यात्रा की व्यवस्था करवा दी।

वहाँ जाकर उन्होंने कहा कि तुम्हारी बात पूरी हो गयी। तुम मुझे विदेश ले ही आये, परन्तु मैं जानता था कि यह सब मेरे भाइयों की वजह से ही सम्भव हो पाया है। पिता जी का स्वर्गवास हुआ और चिता शान्त कर जब हम सब लोग लौटे तो उनको देखने का साहस हम लोग नहीं कर पा रहे थे। परन्तु वाह रे हमारी माँ, उन्होंने धैर्यपूर्वक वियोग सहा और हमें ढाढस बंधाया। उन्होंने हम लोगों को प्यार दिया। उनको यह पसन्द नहीं था कि हममें से कोई उनसे दूर रहे। श्याम भइया को कार्यवश बनारस से बाहर रहना पड़ता था तो उनको याद कर बहुत ही बेचैन होती थी कि बेचारा वह अकेला ही रहता है। फिर कहती थी कि शायद भगवान की इसमें भी कोई

मर्जी होगी। मकान की पहली ईंट का मतलब वे जानती थी। हमारी पहली ईंट थीं वे। प्रारम्भ में शंकर भाई जी के कारण पिता जी से संघर्ष करके महमूरगंज में जमीन खरीदी गयी थी। शंकर भैया व माँ में सिर्फ एक ही लगन थी कि अपना मकान बन जाय। यह उन लोगों की कितनी दूर दर्शिता थी क्योंकि यह मकान नहीं होता तो निश्चय ही जानिये हम सभी किसी कीमत पर एक साथ नहीं रह पाते। किराये का इतना बड़ा मकान तो कहीं मिलता नहीं। जिसमें सारा परिवार साथ रह सके।

वैसी अवस्था में अलग-अलग रहना पड़ता परन्तु भाई जी की लगन को देखकर, वे उनके विश्वास को मजबूती प्रदान करती थी और साथ-साथ रहकर मकान बनवाने में सदा उनका सहयोग करती थी। लालच व मोह तो उनसे कोसों दूर रहता था। अगर वो लालची प्रवृत्ति की होती तो पता नहीं कितना धन का अम्बार जुटा देती। परन्तु उन्होंने सदैव त्याग की भावना को सर्वोपरि माना। उनके गोद से भगवान् ने आठ बच्चे छीनकर आँसू सुखा दिये थे। सदैव हमसे कहती थी कि प्रेम सबसे करो परन्तु आसक्ति में लिप्त न रहो। व्यवहारिकता का पूरा ख्याल उन्हें रहता था। उन्हें बहुत शौक था कि उनके पास सदैव खाने-पीने, जलपान की व्यवस्था के व्यंजन रहे। क्योंकि मैं जब भी बाजार से नमकीन, काजू व अन्य सामाग्री लाकर उनके हवाले करता था तो उन्हें मन ही मन अच्छा लगता था परन्तु ऊपर से थोड़ा बिगड़ती थी कि क्यों फालूत का लाते हो। मैं कहता माँ तुम्हें अगर न रखना हो तो मत रखो, हम जगतपुर ले जायेंगे, परन्तु दूसरे दिन वो सारे व्यंजनों को ट्रे में सजाकर रख लेती थी।

आफिस से जब हम लोग आते थे तो बड़े ही प्यार से कहती लें, जलपान कर ले। मैं मन्द-मन्द मुस्कुराता। वह कहती थी कि हमे बहुत अच्छा लगता है कि सारा सामान सजाकर अपने पास रक्खूँ। कभी-कभी मुझे अपनी पत्नी ज्योति की बात पर गुस्सा आ जाता था तो मैं आकर उनके सामने रखता था। तब वह कहती थी कि तुम सारे दोष उस का ही देखते हो। कई काम

माँ के ऐसे थे जो ज्योति कर देती थी। दो-तीन वर्ष पहले एक कष्ट उनकी आत्मा को चुभ गया था, वह कष्ट उनके लिए असहनीय था परन्तु फिर उन्होंने कहा कि प्रभु की इच्छा। सदैव शंकर भैया के लिए वह चिन्तित रहती थी।

दीपशिखा को वह बहुत ज्ञान देती थी परन्तु जितना वो चाहती थी। उतना समय दीपशिखा उनके पास दे नहीं पाती थी। चिराग को कई चीजें खानें में अच्छी नहीं लगती थी तो उसके लिए वो सदैव चिन्ता करती थी। इधर ४-६ महीने से उनकी खाने में रुचि नहीं रह गयी थी। उनकी रुचि सिर्फ (सेविका) ही समझ पाती थी वह कभी-कभी उनके हिसाब का व्यंजन बना देती थी तो वह खूब तारीफ करके आनन्द से खाती थी। प्रति दिन प्रातः आठ बजे से हमारा इन्तजार करती थी क्योंकि पहले डोंगरे जी की भागवत् फिर मुरारी बापू की रामायण, पुष्टि मार्ग की गाथा का भजन वो रोज मुझसे सुनती थी। अन्त में उन्होंने मुझसे कहा भी तुमने बहुत से ग्रंथ हमें सुनाये अब योग वशिष्ठ प्रारम्भ करो। घर के कुछ सदस्यों की आपत्ति के बावजूद मैंने उनकी इच्छा की पूर्ति करने के लिए योग वशिष्ठ प्रारम्भ किया। यह ग्रंथ मैं पूरा नहीं कर पाया था क्योंकि छः सौ पेज पहुँचते ही माँ ने हमारा साथ छोड़ दिया।

कभी माँ ने हमें बताया था कि सच्चे मन से दिया आशिष व सच्चे मन से प्रार्थना भगवान बहुत जल्दी सुनता है। ठीक वहीं घटना १३ जुलाई, १९९९ को प्रातः ७.२५ बजे घटी। जब मैं उस दिन सुबह घूमने नहीं गया। पलंग पर आकर माँ के पास बैठा था। उनका हाल-चाल पूछ रहा था। उन्होंने बताया। रात से शरीर में बहुत दर्द हो रहा है जो असहनीय है। जिस माँ ने कभी भी दर्द का जिक्र नहीं किया व हमें आज कह रही थी कि रात का दर्द असहनीय है। हमने दिल से प्रार्थना की हे ईश्वर उनको दर्द न दो, या तो उसे दूर कर दो या तो अपने पास बुला लो। और पलक झपकते ही माँ ने अन्तिम साँस ले ली। तब मैंने जाना कि माँ ने सच ही कहा था कि दिल से प्रार्थना का क्या अर्थ होता है? आज वो नहीं है, लेकिन हमारे दिल के

प्रेम में अपने आपको स्थापित कर गयी है। माँ हमारी गुरु, सखा व संरक्षिका थी। माँ के पास कुछ ऐसा आकर्षण व चुम्बकीय शक्ति थी, जिसे ईश्वर ने उन्हें प्रदान किया था। जो कोई भी उनसे मिलने आता था उससे वे ऐसे मिलती थी जैसे वर्षों पुराना परिचय हो तथा साथ ही उसके परिवार के बारे में पूरी जानकारी ले लेती थी।

चाहे किसी भी धर्म या जाति का हो उसे वो छोटा नहीं मानती थी। बाहर बरामदे में एक बार मैंने लिख दिया सरस्वती होटल। उन्होंने कहा-नहीं इसे हटाकर 'मुकुन्द राय जी का दरबार लगा' दो क्योंकि सभी लोग प्रसाद लेने आते हैं। बीच में किन्हीं कारणों से नीचे के चौके में दो दिन खाना नहीं बन पाया था। पहली बार उनका तमतमाता चेहरा देखा, तब पता चला कि शान्त सी दिखने वाली सरस्वती माँ को दुर्गा का रुप भी लेना आता है।

जीवन में व्यासजी, प्रहलाद जी, गुरु महाराज को सम्मान देती थी। जगतपुर में हुए ठाकुर जी के मनोरथ व छप्पनभोग तथा घर पर पिछले वर्ष हुए आम के श्रृंगार पर बेहद खुश थी। जब पिछले वर्ष श्रीमुकुन्द राय जी की शोभा यात्रा चुनार जा रही थी, तब राम भईया ने महेश कारपेट में लस्सी व गन्ने के रस का प्रसाद वितरण किया था। उस दिन उनके नेत्रों में ठाकुर जी के प्रति जो प्रेम उमड़कर आंसू रुप में प्रवाहित हुआ तो यह महसूस हुआ कि श्रीमुकुन्दराय जी के प्रति कितनी गहन आस्था उनमे थी। इधर कुछ दिनो से दिपशिखा के लिए सदैव चिन्तित रहती थी। इसके विवाह में तुम सभी भाई बहन मिल कर अच्छा से अच्छा कार्य करना। सभी बहुओं को एक साथ देखकर इधर बहुत खुश रहती थी। वज्रादपि कठोराणि, कोमलानि कुसुमादपि व्रज सी कठोर और कुसुम सी कमोल माँ १३ जुलाई को सुबह शांत हो गयी।

—दीपक माहेश्वरी

पाठशाला माँ सरस्वती की

स्कूल और किताबों की शिक्षा से जो नहीं मिला, वह माँ सरस्वती की पाठशाला में पाया, जिसमें प्रेम, प्यार, त्याग, परोपकार और दूसरों को सुख देने की भावना प्रधान है। माँ ने अनकहे बहुत कुछ सिखाया और मन में उतार दिया। वो हर एक की सुख सुविधा का विशेष ध्यान रखती थी। हमारे ख्याल से यही मूल मन्त्र है, उनके विद्यालय की सफलता का और हमारे परिवार की उन्नति का।

हम जानते हैं वे हमें कितना प्यार देती थी। सहज प्यार तो वो सबको बाँटती थी और मुझे तो वह बहूरानी कह कर पुकारती थी। दुनिया की नजरों में हम दूर थे, लेकिन अपनी और उनकी नजरों में सदैव पास थे।

माँ आज मैं करती हूँ यही वादा कि आपकी इस लगाई बगियाँ को सजायेंगे, सँवारेंगे और निखारेंगे। हम इसी तरह से मिलजुल कर रहेंगे और अपने परिवार का नाम सदा बढ़ायेंगे। अपनी माँ से जो संस्कार पाये, उन्हें सासू माँ को समर्पित करती हूँ।

मधु
(बहूरानी)

एकता का सूत्र

जिनके मन में उदारता, व्यवहार में नम्रता,
कार्य में श्रेष्ठता, बात में सरलता
हृदय में विशाल प्यार का सागर,
जो किसी गागर में ना समाये,
सब के लिये समदृष्टि
हर एक को गले लगाये,
ज्ञान भण्डार से थी परिपूर्ण,
ध्यान रखती थी सबका सम्पूर्ण
जो बसी हुई हैं हमारे हृदय के तारों में,
जैसे कोई गुलशन छिपा हो वसन्त की बहारों में-

ऐसी थी हमारी आदरणीय व प्राणप्रिय दादीमाँ। उनके मन में अपने व पराये का भान न था। वे हर एक के लिये कुछ न कुछ कर गुजरने की चाह रखती थीं, वे सहनशीलता व त्याग के कारण परिवार के एक एक सदस्य को एक माला में पिरो कर रखती थी। माँ ने हमें सदैव संस्कारों की छत्रछाया में रखा एवं अपने सिद्धांतों व आदर्शों पर अमल करना सिखाया। चंदन की तरह स्वयं को शीतल रखती थी और ज्ञान की सुगन्ध से सबकों लाभान्वित करती थी। उनके गुणों को व्यक्त करने के लिए आज मेरे पास शब्द नहीं हैं। ईश्वर से मेरी यही प्रार्थना है कि मुझे हर जन्म में मेरी दादीमाँ की पौत्री होने का सौभाग्य प्राप्त हो। ऐसी वात्सल्यमयी दादीमाँ को मेरा शत-शत नमन।

दीपशिखा
(छोटी पौत्री)

सब कुछ मिला मुझे माँ के कारण

एकता की शक्ति,
　　वात्सल्य की मूर्ति।
सेवा, उदारता सहनशीलता,
　　सर्वगुणों से थी सम्पन्न।
प्यार से खिली थी,
　　दुजारी परिवार की बगिया।
हँसती खेलती थी,
　　दुजारी परिवार की लड़कियाँ।
धन्य भाग्य हमारे,
　　जिसने पाया जन्म इस परिवार में।
माँ के प्यार से
　　सभी पोते पोतियों थे ओत-प्रोत।
पिरोयी हुई थी सभी लड़ी लड़ियाँ,
　　खिली हुई थी दुजारी परिवार की बगिया।
बगिया में खिले चार फूल,
　　हर फूल की थी अलग ही महक।
चार फूल में खिली थी दो कली,
　　चारों से जुड़ी थी वह एक लड़ी।
भतीजियों का सिरताज है बुआ,
　　प्यार करती हैं, इनको चाचियाँ
चाचा, पापा, प्यार ही लुटाते,
　　बाई से भी सदाप्यार पाते।
सब कुछ मिला था,

मुझे माँ के कारण।
सभी ने बनाये अपना परिवार इसी कारण
महक उठे मेरा भी आँगन
यही प्रार्थना करते हैं हम सब जन।

बेला मोहता
(प्रथम पौत्री)

दूर रहकर भी प्यार पाया निरन्तर

मेरी प्यारी दादी माँ, आपकी यादें और आपका प्यार हमेशा हमारे पास रहेगा। आपकी स्नेह भरी मुस्कान और आपके प्यार भरे दिल ने सारे परिवार को जीत लिया था। आप हमारी प्रेरणा हैं और हमेशा रहेंगी। आपके स्वभाव में जो वास्तविकता थी। उसी के कारण आज हमारा परिवार आगे बढ़ रहा है और बढ़ता रहेगा। आपका प्यार और आशीर्वाद सबके ऊपर छाया हुआ है। आपके सब पोते-पोती बहुत सौभाग्यशाली हैं कि उन्हें आप जैसी मूर्तिमती श्रद्धा मिली। हम सब आपकी ममता की परछाई में बड़े हुए हैं शायद इसी लिये आपको माँ के नाम से ही जाना। परन्तु आपका दादीमाँ वाला प्यार कभी नहीं भूल पायेगें। आपके साथ हँसना, पूजा करना, आपके हाथ का खाना खाना, और आपकी प्यार भरी बाते सुनना, ये सब ही हमारी यादें रहेगी। मैं बहुत सौभाग्यशाली हूँ कि दूर रहकर भी आपका पूरा प्यार मिलता रहा। माँ आपकी याद तो बहुत आयेगी। लेकिन आप इतनी प्यारी यादें छोड़ गई है कि उसी से मन बहल जायेगा।

रोहित (पौत्र)
टोरोन्टो-कनाडा

Ma--Our Own Dadimaa
पोतियों की भावभरी श्रद्धांजली

Ma, one of the smallest word in the thickest of dictionary, yet volumnous, but the topmest word in the dictionary of love, patience, affection, sacrifice We have been very lucky to have ourselves achknowledged with these priceless assets of life in a living personality who was none other than our own--very own DADIMAA :

दादी और पोती का तो रिश्ता था, पर वे तो 'माँ' जैसे विशाल व्यक्तित्व का सही प्रतिबिम्ब थी हमारी 'माँ' जगत् 'माँ' थी।

हम सबकी शक्ति थी माँ हम सबकी भक्ति थी माँ शक्ति और भक्ति के इस अभूतपूर्व मिश्रित भाव ने हम सबको हर दुविधाओं से उबारा।

What ever instances she narrated to us about her life had a hidden message which has proved to be the goden key in resoling whatever little problems weve faced in our lives.

उनकी छोटी छोटी बातें जैसे आतिथ्य सत्कार, प्रेम से बोलना, अपना बड़प्पन बनाये रखना, नौकरों को ईसान समझना, कठिन समय में धैर्य रखना, भगवान् का स्मरण, फल प्राप्ति के लिये भाकांक्षा नहीं करना वरन् भगवान् के सामने यही प्रार्थना करना कि 'हे भगवन् सदैव अपनी कृपा बनाये रखना............' इस एक लाईन को भगवान के सामने कहना और वह सब कुछ पा लेना जो अपने अंदर की चाह है. . . . .

So the bottom line is that alongwith being simple Ma was a dynamic lady too, which is the need of this modern era......hence our was 'Ma' modern too.......

'Ma' was an institute in herself. Her benign presence radiated enough knowledge upon all of is in every walk of our lives. Today, we all granddaughters, who re been so lovingly sent away to bloom in our very own houses, must solemly pledge to make 'Ma' an eternal being in our lives by practicing the values, principle discipline of her life. This will in true sense be a real 'shradhanjali' to our very dear Ma.

अंत में हम सबकी यही प्रार्थना है कि हे भगवन् माँ के गुणों के गागर से छलकी हुई जो अतिशय छोटी बूदें हम पर पड़ी हैं, उससे हम भी अपने बच्चों में वे संस्कार अभिसिचिंत करें, जिससे कि वे भी हमें 'माँ' समझ सके जैसे कि हम गर्व ही नहीं अभिमान से कहते हैं कि यह हमारी 'माँ' है.......

We all love you Ma very very much...........

विनीता
(पोती)

She will always be in our hearts

यह पत्र न्यूयार्क से उनकी छोटी नतिनी का आया है जिसने अपनी छोटी सी उम्र में ही नानी के हर गुण को सराहना ही नहीं जीवन के हर मोड़ पर उसके अनुकरण का प्रयास करती रही है।

Dearest Mummy.

I am sorry for not being able to write anything about naniji and send it earlier. Mummy I am finding it extremely dificult to write about naniji may be because I am still in denial of the fact that she is no longer there with us. Everytime I sit down to write about her I have te face the reality of her being no longer there with us anymore. I think I will have to come to banaras and see for myself that she is no longer sitting on her bed with her small aluminium box beside her with everyone surrounding her all the time.

It is so difficult to write about someone with power has long been admired and envied by all those who knew her but I think the one characteristic which set naniji aside from every other person was that shehad no expectations of any sort from any-one. No complaints against anyone. I don't know about others but I do know that I have not always been the perfect grand-daughter to naniji but not once did she ever make me feel that I was being less than perfect. She was happy if we came to meet her and sat with her for sometime but even when as kids we were busy playing amongst ourselves we could never: hear her complaining that we are not spending time with her. There are many other people who don't have any expectations from oth-

er's but seldom are there people like naniji who gvae her 100% to everyone she knew without expecting anything in return. Whether it was as a mother, mother-in-law or a grandmother, she simply excelled in every sphere of life. If all of us could be like her in this regard would all of us be much happier than what we are today? Be your best and give your best to everyone you know and be happy and content with what they give back to you--that seemed to be the essence of naniji is life and I hope that we children can understand and adopt this selfless attitude of naniji's. There is so much more that I can write about naniji and what I wish I could have learnt from her. Her strong will power and calm nature has been exemplary for all of us and her ever smiling face is embedded in all our memories. Naniji, we loved you for being a wonderful grandmother but most of all we salute you for being the incredibly wonderful person you were and giving us so much to learn by just being with you and observng you.

Mummy. I have so much more to write but sadly my hands are not assissting me any more. I can go on because I still cant believe that the next time when I go to Banaras, naniji will not be there for us. Several people come and go but very few touch our lives in the special way that naniji did and that's why they are the most difficult to forget.........Naniji may not be there amongst us anymore but she will always be there in our hearts, guiding us, teaching us and loving us in the special way in which only she could.

Bye and lots of love.

--Swati.
Newyork, U.S.A.

अन्तर मन की कथा

पानी पे नाम लिखते रहे सोचते रहे
क्या-क्या न किया हमने उस नाम के लिए?
मंदिर के लिए हाँ न किसी धाम के लिए
दिये जलाये हमने राहे आम के लिए
'मोती' सा तन दिया, मन ज्ञान के लिए
'गंगा' की शान सरस्वती परिवार के लिए
पानी पे नाम लिखते रहे सोचते रहे
क्या-क्या न किया हमने उन नाम के लिए?
मंदिर के लिए हाँ न किसी धाम के लिए
दिये जलाये हमने राहें आम के लिए
माँ-बाप की अकेली परिवार की चहेती
प्रारब्ध की धरापर हिम्मत लिए खड़ी थी
कष्टों की ना कमी रही, दुख भी खड़े थे द्वार पर
गोपाल नाम साथ था, मझधार के लिए
मंदिर के लिए हाँ न किसी धाम के लिए
दिये जलाये हमने राहे आम के लिए
कष्टों से ना डरी कभी, दुख गोद में लिए
गंगा को सौपती रही सत्यनाम के लिए
मंदिर के लिए हाँ न किसी धाम के लिए
दिये जलाये हमने राहे आम के लिए
कष्टों को झेल-झेल कर कुंती बनी रही
मीरा न बन सकी हरी नाम के लिए
मंदिर के लिए हाँ न किसी धाम के लिए
दिये जलाये हमने राहे आम के लिए

कुनबा बटोरती रही और सोचती रही
महकेगा यह चमन हमारी शान के लिए
मंदिर के लिए हाँ न किसी धाम के लिए
दिये जलाये हमने राहे आम के लिए
गीता का कर्मयोग ही आधार था मेरा
बच्चों को मिल गया संस्कार में मेरे
बच्चे जिये, बड़े हुए सज्ञान भी हुए
कंधे से कंधा मिल गया परिवार के लिए
मंदिर के लिए हाँ न किसी धाम के लिए
दिये जलाये हमने राहे आम के लिए
दुःख की घटा छटी सुख सामने खड़ा था
गीता के कर्म ज्ञान का परिणाम यू मिला था
भण्डार यू भरते गये मैं देखती रही
'याची' के शब्द सुन लिए संतान के लिए
मंदिर के लिए हाँ न किसी धाम के लिए
दिये जलाये हमने राहे आम के लिए
चारों की चार शक्तियाँ लाई थी शान से
विश्वास ये बना रहे अभिमान के लिए
मंदिर के लिए हाँ न किसी धाम के लिए
दिये जलाये हमने राहे आम के लिए
समृद्ध शक्तियों ने कुछ काम यू किया
दिल द्वार बन्द हो गये अभिमान के लिए
मंदिर के लिए हाँ न किसी धाम के लिए
दिये जलाये हमने राहे आम के लिए

कुदरत को क्या कहे मुझे शीशा बना दिया
पत्थर सहेज लीजिए इनाम के लिए
मंदिर के लिए हाँ न किसी धाम के लिए
दिये जलाये हमने राहे आम के लिए
एहसास मर रहा है मेरे अपने छोड़ दो
छोटा सा एक चिराग मेरी शाम के लिए
अब भी समय बचा है मेरी मान शक्तियों
मिल बैठो पास मेरे कुछ ज्ञान के लिए
मंदिर के लिए हाँ न किसी धाम के लिए
दिये जलाये हमने राहे आम के लिए
कर्म तुम करते रहो बढ़ते ही तुम रहो
संदेश बाँटती हुँ हर नाम के लिए
मंदिर के लिए हाँ न किसी धाम के लिए
दिये जलाये हमने राहे आम के लिए
कष्टों को बाँटते रहो, दुख-दर्द को हरो
आपस के स्नेह-प्यार का परचम लिए हुए
मंदिर के लिए हाँ न किसी धाम के लिए
दिये जलाये हमने राहे आम के लिए
लालन की सेवा-भोग का परसाद यूँ मिला
'सरस्वती सदन' को चार आधार यूँ मिला
शंकर गुणों के तेज का एहसास है मुझे
भोला बड़ा है वह अभिमान के लिए
घनश्याम मुझसे दूर है पर आस है मेरी
अन्तिम विदा तो देगा कंधे लिए हुए
'हरी' कहूँ 'गीता' कहूँ विमला कहूं बहुनाम है

परिवार माला की सुमरनी नाम से विख्यात है
मनोरथ के राम नाम की माला लिए हुए
सब कुछ किया है सत्य नाम के लिए
यह आस ही नहीं विश्वास है मेरा
जलता रहे दीपक मेरे परिवार के लिए
मन मोहन को पास अब कुछ नहीं मेरे
मन-इस में लगा अर्पित चिराग है
वत्सल की राह जोहती अब तक बनी रहीं
सोने की सीढ़ी चढ़ स्वर्ग द्वार के लिए
मंदिर के लिए हाँ न किसी धाम के लिए
दिये जलाये हमने राहे आम के लिए
अब चाह बस यही है मधुवन खिला रहे
कैलाश के शिखर पर बादल घना रहे
राधा की प्रेम भूमि पर सुधा बनी रहे
बस राम के करों में दीपक जला रहे
भंडार खोलकर मेरे आ पास बैठ लो
तन-मन को बाँट ते रहो दुख दर्द के लिए
मंदिर के लिए हाँ न किसी धाम के लिए
दिये जलाये हमने राहे आम के लिए
पानी पे नाम लिखते रहे सोचते रहे
क्या-क्या न किया हमने उस नाम के लिये,
मंदिर के लिए हाँ न किया धाम के लिए
दिये जलाये हमने राहे आम के लिए।

—लक्ष्मण माहेश्वरी (मणियार)
मानसपुत्र

माँ के बाद

एक छत्र छाया सिर पर थी, नियति ने उसे उठा लिया।
ममता की सरिता बहती थी, अपनी बगिया का सिंचन करती थी।
विधना ने उसे यूं घुमा दिया, गंगा में मिला पावन किया।।

पू० बाबूजी के बाद पू० माँ ने अपने आंचल में हमें यूं समेट लिया था कि हम सभी सुरक्षित थे। पर आज वह ममता प्रेरणा बनकर मुझे शक्ति दे रही है परिवार की जिम्मेदारी को संभालने की। मेरे छोटे भाई बहनों का मेरे प्रति स्नेह, प्यार आदर सम्मान ही मेरा विश्वास है, ताकत है, और इसी विश्वास प्यार के बल पर मैं इस जिम्मेदारी को निभा लूंगा।

अभी तक पू० माँ के आंचल की छत्रछाया में हर सुख का अनुभव हमें सहजता सरलता से मिलता रहा। हर कष्ट के समय माँ रुपी वृक्ष हमारे सिर पर अपने आंचल की छाया कर हर तूफान को स्वयं सहनकर लेती थी। पर उस आंचल की छाया अब कहाँ से मिलेगी। उनके प्यार की शक्ति मेरे विश्वास को मजबूत कर रही है। उस आंचल के दूध की शक्तियाँ (चारभाई) आने वाले समय में एक होकर हर कार्य को उत्सव की तरह मनाएंगे।

—शंकर लाल दुजारी
(ज्येष्ठ पुत्र)

१३ जुलाई

१३ जुलाई १९६५ मुझे धरती पर लाई
दादी माँ ने आंगने में थाल बजाई।।
पोते होने की खुशियां सारे घर में छायी
दादी माँ उस दिन फूली नहीं समाई
दादी माँ ने भेजी घर-घर मिठाई
दादी माँ को सबने दी बधाई
३४ वर्षों तक वो अपने पोते को लाड लडायी
जब घड़ी, पोते की कुछ करने की आई
दादी माँ ने अन्तिम सांस के लिये फिर चुनी १३ जुलाई
जन्म दिन की खुशियाँ मैंने अब तक मनाई
अब उस दिन मेरी छूटेगी रुलाई
अब तो सिर्फ दादी की यादें ही रहेंगी समाई
अब कौन कर पायेगा उनकी भरपाई
मैं नहीं भूल पाऊंगा वो तेरह जुलाई

—मनमोहन
(प्रथम पौत्र)

एक अनमोल रतन

'माँ' है एक अनमोल बोल,
नहीं है जिसका कोई तौल,
हृदय में था इनके प्रेम भाव,
नहीं था उनमें कोई भेद भाव।।

दादी को हम 'माँ' भी कहते,
हम सभी हैं उनके चहेते,
'माँ' थी ममता की छइयाँ,
परिवार के नईया की थीं खेवईया।।

'शंकर'-'श्री' थे इनको प्रिय,
'राम' दुलारे' 'श्याम' थे प्यारे
पोते-पोतियों से बगिया खिली थी
पड़-पोते की खुशियाँ मिली थी।।

'माँ' थी एक अनोखा हीरा,
समझती थी वह सब की पीड़ा,
खुद का दर्द कभी न दर्शाती,
रहती थी वह सदा मुस्कराती।।

'माँ' अब जब अतीत हो गयी है
ऐसा प्रतीत होता है जैसे–

मधुमक्खी के छत्ते से,
रानी खो गयी है।।

दादी माँ का लाडला गुण्डा,
–अर्पित

जीवन - निधि

माँ की वाणी द्वारा मिली ज्ञान निधि हम सभी के लिए एक ऐसा बैंक बैलेंस है, जो कि हम कभी withdraw नहीं कर सकते, पर जिन्दगी भर उसका Intrest लेते रह सकेंगे।

पोता
—मनीष

वृक्ष का एक फूल

पूज्य नानीजी और नानाजी हमारे जीवन में उस वृक्ष की जड़ की भाँति है, जो वृक्ष को जमीन से बाँधे रखता है। उन्होंने अपने जीवन से ईमानदारी, अनुशासन का महत्व, सामाजिकता का महत्व, सहनशीलता और विवेकशीलता जैसे मार्गदर्शक मूल्यों को प्यार के पानी में इस तरह घोल कर सोचा कि, अब हम अपने जीवनकाल में चारों ओर खुशबू फैलाते रहेंगे।

कुछ दिन बाद हम भी वृक्ष की जड़ बन जायेंगे और नये फूल खिलेंगे। जीवनचक्र इसी तरह चलता रहेगा। इस जीवनचक्र से भली भाँति गुजरने के लिए नानीजी, नानाजी हमें और आगे आने वाली पीढ़ियों को आशीर्वाद दें।

—अनुराग
(नाती)

स्थितप्रज्ञ–दर्शन

नानीजी को देखती तो वे मुझे स्थितप्रज्ञ सी मालूम पड़ती थीं। ममता मयी, किन्तु राग-द्वेष से ऊपर उठ कर उन्होंने अपने आपको विशेष बना लिया था। उनका सदैव मुस्कराता चेहरा हममें आनन्द का भाव संचित कर देता था। उनकी स्मृतियाँ हमें सदैव स्थितप्रज्ञ दर्शन की याद दिलाती रहेंगी।

—वत्सला

(नाती की पुत्र-वधू)

परिवार में रहते हुए च सुधैव कुटुम्बकार की साधना

ओऽम् भूर्भुवः स्वः
तत्सवितुर्वरेण्यं भर्गो देवस्य धीमहिधियो यो नः प्रचोदयात्।।

विश्वनियन्ता की अनुकम्पा के समक्ष सम्पूर्ण सृष्टि शरणागत है, आज उन्हीं की शरण से अभिभूत होकर वात्सल्यमयी माँ को मैं हृदय से श्रद्धांजली दे रही हूँ। जीवन के अन्तिम समय में अपने प्रियजनों एवं स्वजनों का साक्षात्कार कर आज वे महायात्रा की ओर प्रस्थान कर चुकी हैं। उनकी यह यात्रा आनन्दमयी एवं मंगलमयी हो, यही मेरी ईश्वर से अभ्यर्थना है।

आदरणीय माँ के व्यक्तिगतजीवन के बारे में लिखने के लिए अन्तरज्ञान एवं अन्तरचक्षुसों की आवश्यकता है। जो बहुत सुक्ष्मता से निरीक्षण कर उनके वास्तविक चरित्र को उजागर करे। यह कार्य कठिन तो अवश्य है, लेकिन फिर भी मैं उनके आदर्शों को पृष्ठों में लिखने का प्रयास कर रही हूँ।

अनमोल गुणों से सुसज्जित माँ का आध्यात्म ज्ञान, मधुरवाणी का महामंत्र, अनुशासन प्रियता, प्रियजनों एवं स्वजनों का सम्मान, चरित्रिक विकास, सत्संग के सरगम को सहृदयतापूर्वक सुनने वाली वात्सल्यमयी एक आदर्शमयी माँ थी।

अपने बचपन की गाथा को वो खुद कहानी के रूप में सुनाया करती थी कि किस प्रकार नानी माँ के संसर्ग में रहकर काशी के प्रसिद्ध महात्माओं से उनकी भेंट हुई गृहस्थी की गाड़ी किस प्रकार चलानी चाहिये, कम उम्र में ही विवाह का होना और वहाँ नीद के झोंके आना अपने सासुमां एवं ससुरजी की लाडली बहू होने का स्वाभिमान, अचानक परिवार की जिम्मेदारी, बाबूजी को किन-किन कठिन-परिस्थितियों से गुजरना पड़ा आदि अनेक प्रकार के जीवन के खट्टे-मीठे अनुभव को बातों ही बातों में सुनाया करती थी।

मैं तो उनके संसर्ग में रहकर यही समझी कि उनकी दिनचर्या प्रातकाल ४ बज़े एक विशाल माला के महामंत्र से शुरु होती थी, माला का जाप करते-करते वो 'ध्यान' करती थी। उस समय उन्हें किसी प्रकार की खट पट पसन्द नहीं थी। मुझे तो लगता है कि उस महामंत्र के जाप से एक दिव्यशक्ति का प्रस्फुरण होता और अज्ञात शक्ति के द्वारा ठीक माला की भाँति परिवार के छोटे-बड़े सदस्य एक ही जगह केन्द्रित होकर उनके आकर्षण में बँध जाते, तट पश्चात् परिवार का वार्तालाप, मिलाप शुरु होता कोई धर्म का व्याख्यान करता तो कोई तात्कालिक समाज की बाते करता तो कोई खाने-पीने की मजेदार बातें करता तो कोई कहकहे एवं चुटकुले सुनाकर अपना अपना व्यक्तित्व दृष्टि गोचर करते। इन सब बातों को वे बहुत शान्त एवं एकाग्रचित्त होकर सुनती थी और उन्हीं सब कार्यकलापों को देखकर परिवार को एकसूत्र में बाँधने का निकाल लेती थी। ये उनकी आध्यात्मिक ज्ञान या पारिवारिक कला का जीता जागता उदाहरण ही तो है।

मनुष्य जिस क्षेत्र (जैसे परिवार समाज या राष्ट्र) में रहता है, उस क्षेत्र के बारे में सम्पूर्णता से सोचे तो सफलता स्वयं हासिल हो जाती है। नारी होने के नाते उन्होंने परिवार को ही अपना क्षेत्र चुना और बसुधैव कुटुम्बकम् की भावना को बल दिया। महामंत्र के वे शब्द मेरे दिलो दिमाग में सदा गूँजता रहे एवं आशीर्वाद की वर्षा करती रहे।राधेराधे।राधे राधे।राधे राधे।।

ॐ शान्ति। शान्तिः।। शान्ति।।

—शोभा
(नतिनी)

मेरी पूज्य आदरणीय भूवाजी

मेरी पूज्य भूवाजी सरस्वती बाई से परिवार का घनिष्ट सम्बन्ध था। वो मेरी पू० दादा जी स्व० सुगन सिंह जी मोहता की पौत्री एवम् गंगा बाई और मोती सिंहजी की एकमात्र लाडली पुत्री थी। पिता के वात्सल्य स्नेह से एक वर्ष की उम्र ही में वंचित रही। इनका दाम्पत्य जीवन छोटी उम्र में श्रीगोपाल दास जी दुजारी के साथ शुरूहुआ। अपने दादाजी एवम् माँ के स्नेह ने और श्रीविश्वनाथ बाबा की कृपा से काशी को इन्होंने निवास स्थान चुना और अन्त समय तक बाबा के दरबार में ही रहीं।

पूज्य भूवाजी से मेरा सम्पर्क १९३६ से है। उनके सान्धिय में रहने का हमें सौभाग्य प्राप्त हुआ। इस अवधि में मैंने उन्हें हमेशा मुस्कराते हुए ही देखा। दूसरों के दुख और सुख में हमेशा साथ देती थी और सुख-दुख में समान प्रवृत्ति रहती थी, श्रीकृष्ण का दिया उपदेश उन्होंने अपने जीवन में उतारा।

सुखदुःख समंकृत्वा लाभा लाभौ जया जयौ

वह सबको सुखी देखना चाहती थी। सर्वे सुखिनः सन्तू सर्वे सन्तु निरामया वे प्रेम और स्नेह की प्रतीक थी।

ऐसी ममतामयी और स्नेहमयी देवी के न रहने का हम सभी को अपार दुख है। उनके आदर्शों पर चलकर हम उन्हें श्रृद्धांजली दे सकते हैं।

आज वह अपने पीछे भरा पूरा परिवार छोड़ गयी है। प्रभु से यही प्रार्थना है कि उनकी दिवगंत आत्मा को शान्ति दे और परिवार वालों को बल दे इस अपूर्व क्षति को झेलने की। जयश्रीकृष्ण

—किशन सिंह मोहता

सेठानी माँ

श्रीपूज्यनीय माँ सादर धन्-धन् जैश्री कृष्ण प्रनाम श्रीपूज्यनिय माँ का स्नेह प्यार सन् १९६३ से १ जून सन् १९७७ तक इतना मिला कि जिस को मैं जिन्दगी भर नहीं भूल पाता हूँ माताजी का व्यवहार सदा हर एक आने वाले महमान ब्राह्मण गुरु सभी का पूर्ण आदर सतकार के साथ पूर्ण स्वागत करना व सभी प्रकार के दुख दर्द घर परिवार के विषय मैं पूछना व तकलीफ में साथ देना उनका स्वभाव था मैं जब भी बनारस आता तब माँ के पास ही रात के समय मैं बैठता था इससे पहले में सन् १९९७ मैं बनारस आया था उस समय माँ इतनी मेरे को देख कर खुश हुई थी गुरु महाराज आप आज आ गये हैं। मैं इतनी खुश हुई हूं कि मेरी सीमा नहीं है। व रात को जब मैं माँ के पास बैठा और पड़ पोते की बधाई दी तो माँ ने कहा की गुरु महाराज आप लोगों के आर्शीवाद से हमारे परिवार में सात पिढ़ी में मैं ही हूँ जिसने पड़ पौता देखा है व सौने की निसरनी बहुते ही खुश हुए और मैरे को जाते समय बहुत ही अच्छी बधाई दी व विदाई कराई मैं जब भी माँ के पास बैठता तो वह मेरे को अपने परिवार का सदस्य की तरह स्नेह देती व दुख दर्द भी बाते सुनकर हमेशा यही उपदेश देती की कर्म करते रहें व भगवान् का स्मरण करे जिससे भगवान् सब कष्ट दूर करेंगे माँ का स्वभाव इतना सीधा व सरल था कि कभी कभार अपने जीवन की चर्चा भी करती थी अब भगवान् का दिया सब कुछ है। सभी लड़के मेरी खुब ही सेवा करते हैं। सिर्फ घनश्याम ही है। जो दूर रहता है। पर बहुत ही याद करता रहता है। मैं अपने पूरे परिवार से बहुत ही खुशहू सदेव भगवान् का ध्यान करना व सचाई व ईमानदारी ही सिखाती थी पूज्यनीय माँ जहाँ भी है। भगवान् उनकी आत्मा को शान्ती दें।

—*सुन्दरलाल पारीक*
बीकानेर

पूज्यनीय व्यक्तित्व

वे मेरी भाभी की भुवा थी। इसलिये मैं उन्हें भुवाजी ही कहा करता था। उनका वात्सल्य भाव अनुपम था। उनके प्रति उमड़ते भावों को शब्दबद्ध करने में बड़ी कठिनाई का अनुभव कर रहा हूँ। वे क्या थीं? यह कहना कठिन है। लौकिक सम्बन्ध तो सब का अलग-अलग अपनी जगह होता है। गुण शील और स्वभाव के आधार पर यदि भुवा जी की जीवन लीला पर हम विचार करना चाहें तो हमें बहुत सावधानी से अपनी दृष्टि की निरपेक्षता को परखना पड़ेगा। मैं जो कुछ लिखना चाहता हूँ, भले ही किसी को अतिशयोक्ति लगे-पर मेरे ऊपर उनके सान्निध्य का जो प्रभाव पड़ा है, उसे व्यक्त न करना अपने प्रति अन्याय होगा।

पूजनीय भुवा जी भारतीय संत-परम्परा की अनुगामिनी थीं, तथा गरिमामयी सद्गृहस्थ महिला थीं। केवल इन्हीं दो विन्दुओं को ध्यान में रख कर हम उनकी जीवन लीला का चिन्तन कर सकें तो शायद निरपेक्षता का निर्वाह हो।

संत की स्थिति रामचरितमानस के अनुसार सर्वोच्च है। मुनि, ऋषि, योगी, सिद्ध आदि कई श्रेणियाँ साधकों की हैं। परन्तु गोस्वामी जी संतत्व को श्रेष्ठतम रूप में देखते हैं। संतत्व के विकास क्रम में सरलता, सहजता, सब के प्रति निस्वार्थ प्रेम तथा भगवदाश्रयी होना एक आवश्यक पक्ष माना जाता है। इन शब्दों को साधारण अर्थ में कदापि न लें। सरल होना, सहज होना बहुत ही कठिन है। बड़ी लम्बी साधना के बाद व्यक्ति सरल एवं सहज हो पाता है। साधना से सिद्धि मिलना सरल है। पर सरलता और सहजता प्राप्त करना कठिन है।

भुवा जी स्वभाव से सरल थीं। छल, कपट आदि प्रपंचों से दूर गृहस्थ जीवन में रहने के कारण सभी प्रकार के लोग उनसे मिलते थे। अलग-अलग भाव के लोग मिलते थे। मिलना पड़ता था, पर वे निर्लिप्त भाव से सब के प्रति सहज रहती थीं। किसी की निन्दा करने या सुनने में उनकी कोई रूचि नहीं रहती थी और न ही अपनी प्रसंशा ही सुनना चाहती थीं। उनका स्मित मुख न तो किसी का समर्थन करता था, न विरोध। वह परिचायक था निर्लिप्तता का। उनकी सहजता का स्वभाव बड़ा विचित्र था। दुजारी -परिवार स्वभाव से आनन्दी तथा उत्सव प्रिय रहा है। आये दिन कोई न कोई धार्मिक या सामाजिक उत्सव होता रहता है। अस्वस्थता

के बावजूद दूसरों के आनन्द में ही आनन्दित रहने की वृत्ति के कारण वे सहजता से सब कुछ स्वीकार कर लेती थीं। किसी भी भाव भंगिमा के द्वारा उन्होंने कभी भी कोई ऐसा संकेत नहीं दिया कि वे असुविधा में है या अस्वस्थ हैं बड़ा ही गम्भीर भाव था उनका भाव केवल यह था कि यदि मात्र मेरी उपस्थिति से ही पूरा समाज (परिवार, इष्ट मित्र तथा शुभेच्छुगण) प्रसन्नता का अनुभव कर रहा है तो मैं अपनी असमर्थता को क्यों इनके आनन्द में बाधक बनाऊँ।

भुवा जी सभी मिलने वालों को अपने सहज स्नेह भाव का प्रसाद वितरण करती रहती थीं। जो भी उनसे मिलता था, वह उनके सहज मातृत्व स्नेह से आप्लावित हो जाता था। क्यों कि सभी के प्रति उनका हार्दिक स्नेह भाव व्यक्त होता था। ममतामयी तो थीं ही साधना शील भी थीं। उनकी अंतर्मुखी गंभीर साधना कितनी गहरी थी, इसका अनुमान लगाना कठिन था। आप कह सकते हैं कि हम लोग रात दिन मिलने वाले यदि उनकी गहेरी साधना का सन्धान नहीं पा सके, तो तुम यदा कदा उनके पास थोड़ी देर बैठने वाले किस प्रकार ऐसा कह सकते हो। इसके उत्तर में विनम्रता पूर्वक इतना निवेदन करना चाहता हूँ कि सच्चे भागवत भाव सम्पन्न व्यक्ति की बहिर्मुखी वृत्ति में और सामान्य जन की वृत्ति में, एक आधार भूत अन्तर है। सच्चा साधक अपनी साधना-सत्संग तीर्थ दर्शन-महापुरुषों से अपने सम्बन्ध तथा गतिविधियों का आत्मविज्ञापन कभी नहीं करता क्योंकि वह इसे भी भगवान के प्रसाद के रूप में स्वीकार करता है। माँ को मैंने कभी भी अपनी साधना के विषय में कुछ भी कहते नहीं सुना।

कुछ महिनों पहले की बात है। वे अस्वस्थ थीं-पर ठाकुर जी की पूजा के समय तैयार होकर पूजा स्थल पर नियमित जातीं थी। एक दिन संयोग से मैं पहुँच गया। मैंने पूछा जब आप के शरीर में इतनी दुर्बलता है, इतनी शिथिलता है, तब पूजा करने हेतु यहाँ आ कर इतना श्रम क्यों कर रही हैं। उन्होंने स्मित मुखा मुद्रा में कहा—जब तक वे (भगवान्) मुझसे कुछ कराना चाहेंगे-मुझे उठने की शक्ति देते रहेंगे। नहीं कराना होगा-नहीं उठावेंगे। वे शक्ति न दें तो भला मैं कैसे उठूँगी? मेरे पास अपनी शक्ति तो कुछ है नहीं। कितनी सारगर्भित बात उन्होंने सरल भाषा में कह दी। मैं चुप रह गया।

उनकी अस्वस्थता में जब कभी उनसे मिलने जाता तो अपने स्वास्थ्य के विषय में संक्षेप में थोड़ी सी जानकारी देकर दूसरा प्रसंग शुरु कर देतीं। सामने वाले को इतना भी अवसर नहीं देना चाहती थीं कि वह विस्तार से देर तक स्वास्थ्य, चिकित्सा, चिकित्सक की बात करता रहे।

सत्संग वार्ता में भी वे अपनी तरफ से बहुत कुछ नहीं कहना चाहतीं। दूसरों से ही सुनना चाहती। वे साधना के गूढ़ रहस्यों को जो उनकी अनुभूतियों द्वारा नहीं मिला था—कभी भी प्रकट नहीं करना चाहती थीं। उनकी बहिर्मुखता सामान्य सद्गृहस्थ महिला की तरह रहती थीं। कोई भी उन्हें विशिष्ट न समझे। उनके सामने बात करने में संकोच न करे। सदैव यही सहज प्रयास रहता था। गोस्वामी जी ने संत महिमा प्रसंग में कहा है। संत 'सबहिं मान प्रद आपु अमानी' होता है।

प्रायः हर परिवार में परम्परागत विचार धारा तथा आधुनिक विचार धारा के बीच एक कशम-कश चलती ही रहती है। परिवार में वे सब कुछ सुनतीं-देखती, पर किसी भी प्रकार की आलोचना नहीं करतीं-वरन इसे युगधर्म समझ कर सहज रूप से स्वीकार कर लेतीं।

उनकी वार्ता यदि किसी व्यक्ति के विषय में होती, तो वे सदैव उसके गुण पक्ष की बात करती। दोष पक्ष की चर्चा उन्हें नहीं सुहाती।

एक दिन किसी वार्ता के प्रसंग में मैंने विनय पत्रिका का एक भजन उन्हें सुनाया। राम जपु राम जपु राम जपु बावरे। घोर भव नीर निधि नाम निज नाव रे' वे शान्ति पूर्वक सुनती रहीं। बाद में उन्होंने हंसते हुए कहा-गोस्वामी जी महाराज धन्य है बावलेपन को कितना सार्थक बना दिया। यह भजन मैंने कितनी बार सुना सुनाया है, पर कभी इस तरफ ध्यान ही नहीं गया था कि भगवद् नाम लेने के लिये व्यक्ति बुद्धिमत्ता का आश्रय न ले-बावलेपन का आश्रय लेकर हठ पूर्वक अधिक से अधिक नाम लेता रहे। उनका संकेत समझ कर मैं हतप्रत हो गया। कितनी मार्मिक दृष्टि थी।

एक दिन वे योग विशिष्ट पढ़ रही थीं। मैंने बौद्धिक चपलता वश या अहंकार वश पूछ लिया कि भुवा जी, आप यह सब क्यों पढ़ती हैं? यह तो आप की साधना धारा से अलग धारा का प्रतिपादन करता है। कर्मयोग-ज्ञानयोग से अलग

भक्तियोग तो समर्पण का मार्ग है जिसमें केवल नाम स्मरण का ही संबल रहता है। मेरी बात सुन कर वे हँसने लगी। उनकी आदत थीं। वे गंभीरता का मुखौटा कभी नहीं लगाती थीं। गंभीर विषयों की वार्ता में भी वे सहजता का वातावरण बनाये रखतीं। उन्होंने कहा—आप तो भक्तियोग में समर्पण की बात भी कह रहे हैं तो समर्पित बुद्धि से हम जो कुछ भी ग्रहण करेंगे वह प्रसाद ही तो होगा। उनकी सरल भाषा में यह कहना तात्विक दृष्टि से बहुत महत्व रखता है। हम जब कुछ पढ़ते हैं तो हमारी ग्रहण शीलता का आधार क्या रहता है। अहंकार जन्य जिज्ञासा मैं आज कल योगवाशिष्ट का अध्ययन कर रहा हूँ समर्पित बुद्धि से अध्ययन करने में पात्र का आधार बदल जाता है। जो हमारी साधनाधारा के लिए अभीष्ट होगा, उसी की ग्रहणशीलता हमारे अंतस् में जागरूक रहेगी। शेष सब छूट जायेगा। वह प्रसाद होगा। प्रसाद ग्रहण करने में ग्रहीता में विनय भाव होना स्वाभाविक होगा। इस प्रकार अनेक संस्मरण ऐसे रहे हैं जिसमें मुझे उनकी महानता का परिचय मिलता रहा है। वे सदैव सरल रहीं, सहज रहीं। उनकी नाम जप साधना गंभीर मूक साधना थी। ऐसा प्रतीत हो रहा है। 'जाना चहहिं गूढ़ गति जेउ नाम जींह जपि जानहिं तेऊ।' मैं उनकी आध्यात्मिक चेतना के विषय में कुछ कहता हूँ तो उसका आधार उनकी बहिर्मुखी प्रवृत्तियों से है। आप ने देखा होगा वृद्धावस्था में प्रायः एक स्वभाव सभी जगह देखने में आता है। वृद्ध व्यक्ति को अपने भूतकाल की बातें सुनाने में बड़ा रस मिलता है। प्रसंग हो, या न हो, फिर भी वे अपने अतीत की बातें बड़ी रुचि से बताते हैं। दूसरा इस अवस्था में अपनी शारीरिक व्याधिका वर्णन प्रायः लोग विस्तार से करते हैं। माँ का यह स्वभाव नहीं था। अतीत की बातें वे पूछने पर ही कहती थीं। उनकी सहज प्रवृत्ति उन बातों को अपने आप सुनाने की नहीं थी। यही बात शारीरिक व्यथा की वार्ता में भी रखती थी। अपनी शारीरिक व्यथा बहुत थोड़े शब्दों में इस लिये कह देती थीं कि मिलने के लिए आने वाला अवश्य पूछना चाहेगा कि स्वास्थ्य की स्थिति क्या है।

हम लोग ध्यान पूर्वक यदि अन्य वृद्ध-वृद्धाओं की स्वाभाविक प्रवृत्तियों को देखें तो यह अन्तर स्पष्ट दृष्टिगोचर होगा। इसका आधार अंतर्मुखी साधना से है। एक दिन मैं भदैनी आश्रम से लौट कर सीधे उनसे मिलने गया। मैंने कहा

आज मैंने आश्रम में माँ आनन्दमयी का एक चित्र देखा, जिसमें आप का मुख मंडल उनसे मिलता हुआ था। माँ ने हंसते हुए कहा आप ने केवल चेहरा ही देखा था। माता जी (माँ आनन्द मयी) की महानता नहीं देख पाये।

वे भगवदाश्रयी थीं पर बात बात में इसका ढिढोरा नहीं पीटती थीं। प्रायः हम लोग अपने को आस्थावान प्रकट करने के लिये वार्तालाप में कहते रहते हैं। 'भगवान् की इच्छा जैसी होगी वही होगा' पर हमारी मनः स्थिति इसके विपरीत रहती है। भगवद् विश्वास की बात भी कहते हैं और उद्विग्न भी रहते हैं। उनकी आस्था की दृढ़ता का परिचय हमें मिलता है उनकी निरुद्वेगता से।

उनके स्वभाव में बनावटी पन एकदम नहीं था। चाहे कितने दिनों पर उनसे मिलना होता, कभी कोई उलाहना नहीं देती थीं। न कभी देर से मिलने की शिकायत ही करतीं। पौराणिक उपाख्यानों का उन्हें अच्छा ज्ञान सत्संग के माध्यम से हुआ था। पर उसकी चर्चा वे वास्तविक रूप में कभी नहीं करती थीं। जो कुछ अनुभूति परक रहता, उसी पर प्रकाश डालतीं।

बल्लभ-सम्प्रदाय की श्रृंगार साधना के विषय में मेरी आलोचना से वह परिचित थीं। क्यों कि मेरी दृष्टि में यह कभी-कभी वैभव जन्य अहंकार का कारण बन जाता है। इस प्रसंग में चर्चा के दौरान उन्होंने बड़ी सीधी बात कही कि यह सब प्रभु से किसी प्रकार भी जुड़ने का एक माध्यम बनता है। भगवान् तो अंतर्यामी है। वे हमारे मन के भाव को हम से भी अधिक जानते हैं। लौकिक प्रसंग में उनके स्नेह पूर्ण व्यवहार को भुलाया नहीं जा सकता।

एक बार सपरिवार पंचकोशी परिक्रमा का आयोजन हुआ। पूरा परिवार भाई-बेटी-बहू थीं। भुवा जी ने मुझे भी सपत्निक बुला लिया। मेरी पत्नी को किसी घुमावदार रिस्ते से वे अपनी छोटी बहन कहती थीं। तीन गाड़ियों में हम लोग रवाना हुये। प्रत्येक विश्राम स्थल पर पूजन होता था। वे पूजन की पूरी सामग्री की पिटारी लेकर चली थी। भीड़ साथ में काफी थी। पर उनका स्नेह पूर्ण भाव असाधारण था। सभी लोग साथ में थे। परन्तु जब तक हम दोनों पूजन न कर लेते, तब तक पूजन सामग्री के थाल को वे सार्वजनिक पूजा के लिये नहीं देती थी। रामेश्वर महादेव जी तक पहुंचने में मुझे कुछ विलम्ब हुआ। साथ के सभी लोगों ने पूजन कर लिया

था, पर वे थाल लेकर प्रतीक्ष कर रही थीं। जब तक मैंने पूजन नहीं कर लिया, उन्होंने समेटने का आदेश नहीं दिया। कपिलधारा के पहले एक बगीचे में साथ में लाया हुआ आहार ग्रहण की व्यवस्था थी। मैं उत्सुकता पूर्वक घूम फिर एक कुछ देर से पहुँचा। मुझे मीठी झिड़की देते हुए उन्होंने कहा--आप इतनी देर कहाँ घूमते रहे? आपके कारण मेरी बहन अभी तक भूखी बैठी है। मुझे संकुचित देख कर हंसी और मेरा संकोच दूर कर दिया। सभी धार्मिक स्थलों की महिमा वे मुझे बराबर बताती रहती थीं। उनकी आत्मीयता अभूतपूर्व थी।

महेश्वरी भइया (लक्ष्मणदास जी मनियार) की सेवाशीलता से वे भाव विभोर रहतीं, पर उनके सामने कुछ न कहतीं। उन्हें लगता कि उनके मुंह पर सराहना करना उनकी सेवा की गुरुता को हलका बनाना है।

महाप्रयाण के कुछ दिन पूर्व उन्हें संकोच लगा रहता है कि घर वाले उनकी चिकित्सा के लिए इतना अधिक व्यय क्यों कर रहे हैं। शरीर का धर्म है यह तो धीरे-धीरे क्षीण होता ही रहेगा।

वे चली गयीं। उनकी पुण्य स्मृति शेष रह गयी। धीरे-धीरे सब कुछ क्षीण हो जाता है। लौकिक दृष्टि से तो लोग यही कहेंगे-भरा पूरा सुखी सम्पन्न परिवार छोड़ कर गयीं। वे पुण्य शाली थीं। पर उनके जैसा मातृत्व भाव बरद हस्त से हम सभी लोग वंचित हो गये।

उनके आशीर्वाद भाजन मेरी तरह अनेक लोग हैं। सब पर अलग-अलग प्रतिक्रिया होगी। परन्तु यह भी सत्य है कि मातृ स्वरूपा पूजनीय इस प्रकार का व्यक्तित्व सभी के मन में एक अनिर्वचनीय रिक्तता का अनुभव कराता रहेगा।

शिवचन्द कोठारी--
प्रदेश अध्यक्ष पूर्वी उ० प्र० माहेश्वरी सभा

'त्वमेव माता च पिता त्वमेव

त्वमेव बन्धु च सखा त्वमेव'

माँ आप मेरे लिये माँ थी, पिता थी, मित्र एवं सखा सब कुछ थी। एक सास होते हुए भी आप एक ममतामयी माँ की तरह हर रूप में मेरे साथ थी। आप मेरे लिये एक शक्ति थी, संबल थी, आत्मविश्वास थी।

ठाकुरजी की सेवा मुझे सौपकर जो विश्वास आपने मुझमें बताया उसे श्री ठाकुरजी अवश्य पूरा करायेंगे।

—ज्योति

(पुत्रवधू)

माँ के प्रिय भजन

बैष्णव जन तो तेने कहिये, जे पीर पराई जाणे रे
पर दुःखे उपकार करे तोए मन अभिमान न आणे रे।। वैष्णव......
सकल लोक माँ सबने बन्दे, निन्दा न करे केनी रे।
बाच काछ मन निच्छल राखे, धन धन जननी तेणी रे।।वैष्णव......
समदृष्टि ने तृष्णा त्यागी, पर स्त्री जेणे मात रे।
जिह्वाकी असत्य न बोले, पर धन नव झाले हाथ रे।।वैष्णव......

सुमिरण करते छुटें मेरे प्राण यही वर माँगू मैं।
रहे जनम जनम तेरे साथ प्रभु यही माँगू मैं।।
मेरी आशा निराशा कर.ा नहीं,
मेरं अवगुण हृदय नाथ धरना नहीं,
मुझको दे देना दर्शन दान, यहीं वर माँगू मैं.......

तेरा मुखड़ा मनोहर निहारा करूँ
तेरी शक्ति के गुणगान गाया करूँ
रटे श्वांस स्वांस तेरो नाम, यही वर माँगू मैं..........

अपने दासों का दास बनालो मुझे
अपने परिकार में नाथ मिलालो मुझे
रहे अन्त समय तेरो ध्यान, यही वर माँगू मैं.........

(२)

लागे वृन्दावन नीको आली, म्हाने लागे वृन्दावन नीको
घर घर तुलसी ठाकुर पुजा-२
दर्शन गोविन्द जी को
आली म्हाने लागे.............

कुंजन कुंजन फिरत राधिका-२
शब्द सुनत मुरली को
आली हमने लागे........
रतन सिंहासन आप विराजे-२
मुकुट धरयो तुलसी को
आली म्हाने लागे वृन्दावन नीको

निरमल नीर बहत यमुना मे-२
भोजन दूध दही को
आली म्हाने लागे..................

मीरा के प्रभु गिरधर नागर-२
भजन विना नर फीको
आली म्हाने............

(३)

श्री वल्लभ कहो, श्री वल्लभ कहो
वल्लभ नाम बिना भव पार नहीं।

श्रीमहाप्रभुजी बिना उद्धार नहीं।
तिव्ढल नाथ जी बिना जीवन सार नहीं,
श्रीयमुना जी बिना कोई दयालु नहीं,
श्रीनाथ जी बिना बिजु शरण नहीं,
श्री वल्लभ............................

नवनित लाल जी बिना नवधा भक्ति नहीं
मधुरेश बिना मन माने नहीं
विठलेश बिना विश्राम नहीं
द्वारकाधीश जी बिना बिजु शरण नहीं
श्रीवल्लभ...................................
गोकुल नाथ बिना गिरिराज नहीं
गोकुल चन्द्रमाजी बिना राज बिलास नहीं
मदनमोहन जी बिना वेणुनाद नहीं
बाल कृष्ण जी बिना कोई प्रबल नहीं
श्रीवल्लभ.............................

मुकुन्दरायजी बिना मन गमतु नहीं
कल्याणरायजी बिना कल्याण नहीं
श्री हरिशरायजी बिना सिद्धांत नहीं
दामोदर राय जी बिना पुस्टि मार्ग नहीं
पुस्टि मार्ग बिना बुजि कुंज नहीं
ब्रम्ह संबध बिना बिजु कर्म नहीं
श्रीवल्लभ...................................

□